सुंदरम् फाइनेंस लि., तिलक ज्येष्ठ प्रबंधक (विधिक) द्वारा प्रतिनिधित्व

बनाम

अब्दुल समद और एक अन्य

15 फरवरी, 2018

न्यायमूर्ति जे. चेलामेश्वर और न्यायमूर्ति संजय किशन कौल

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26) – धारा 36, 42 और 32 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 39, 47, आदेश 21, नियम 27] – माध्यस्थम् के अधिनिर्णय का प्रवर्तन – माध्यस्थम् के अधिनिर्णय का प्रवर्तन कराने के लिए देश में कहीं भी ऐसे सक्षम न्यायालय में आवेदन फाइल किया जा सकता है और उसे निष्पादित कराया जा सकता है, जहां निर्णीत-ऋणी की परिसंपत्तियां स्थित हैं और इसके निमित्त उस न्यायालय से डिक्री का अंतरण अभिप्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है जिसकी अधिकारिता में माध्यस्थम् कार्यवाहियां हुई थीं ।

अपील के तथ्यों के अनुसार, प्रथम प्रत्यर्थी ने एक टाटा लॉरी खरीदने के लिए सुदंरम फाइनेंस लि. – अपीलार्थी से, ऋण के करार में विनिर्दिष्ट निबंधनों और शर्तों पर, ऋण लिया था । प्रत्यर्थी सं. 2 ने कथित रूप से उसी तारीख को एक अलग प्रत्याभूत पत्र निष्पादित करके ऋण के प्रतिसंदाय के लिए प्रत्याभूति दी । ऋण का प्रतिसंदाय किश्तों में किया जाना था । प्रत्यर्थी सं. 1 ने 20वीं किश्त से आगे संदाय करने में व्यतिक्रम किया । ऋण के करार में अंतर्विष्ट माध्यस्थम् खंड के निबंधनों के अनुसार माध्यस्थम् कार्यवाहियां आरंभ की गईं । मध्यस्थ के समक्ष दावा कथन फाइल किया गया किंतु प्रत्यर्थियों पर इसकी तामीली नहीं हुई । प्रकाशन के माध्यम से सूचना तामील की गई किंतु चूंकि प्रत्यर्थियों की ओर से कोई हाजिर नहीं हुआ, इसलिए एकपक्षीय माध्यस्थम् पंचाट पारित किया गया । मध्य प्रदेश स्थित न्यायालय की अधिकारिता में निष्पादन कार्यवाहियां फाइल की गईं । जिला न्यायाधीश, मुरैना ने अधिकारिता की कमी के कारण निष्पादन आवेदन को सक्षम अधिकारिता के न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने के लिए वापस कर दिया । इस निर्णय का प्रभाव यह था कि अपीलार्थी के लिए यह अपेक्षित था कि वह पहले तमिलनाडु में सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के समक्ष निष्पादन कार्यवाहियां फाइल करे, फिर डिक्री का

अंतरण अभिप्राप्त करे और केवल इसके पश्चात् मुरैना स्थित विचारण न्यायालय में कार्यवाहियां फाइल की जा सकती थीं । इस विषय पर विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया मत मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय और कर्नाटक उच्च न्यायालय की राय पर आधारित था, जबकि यह अभिवाक् किया गया कि राजस्थान उच्च न्यायालय और दिल्ली उच्च न्यायालय के मत इसके प्रतिकूल हैं । आवेदक द्वारा विचारण न्यायालय के उक्त आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालयों की राय में विरोध होने के कारण पहले ही व्यक्त किए गए मत को ध्यान में रखते हुए मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में समावेदन नहीं किया अपितु सीधे उच्चतम न्यायालय में विशेष इजाजत याचिका के माध्यम से सिविल अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – पंचाट को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के उपबंधों के अनुसार उसी रीति में प्रवर्तित किया जाना चाहिए मानो यह डिक्री हो । इस प्रकार, यह प्रवर्तन की क्रियाविधि है, जो डिक्री के प्रवर्तन के समान है किंतु पंचाट स्वयं में सिविल न्यायालय की डिक्री नहीं है क्योंकि सिविल न्यायालय द्वारा ऐसी कोई डिक्री पारित नहीं की जाती है । माध्यस्थम् अधिकरण ही पंचाट देता है और अधिकरण को डिक्री के निष्पादन की शक्ति नहीं होती है । डिक्री के निष्पादन के प्रयोजनों के लिए पंचाट को उसी रीति में प्रवर्तित किया जाना चाहिए मानो यह उक्त संहिता के अधीन डिक्री है । इस प्रकार, न्यायालय का बेहिचक यह मत है कि पंचाट का निष्पादन के माध्यम से प्रवर्तन देश में कहीं भी जहां ऐसी डिक्री निष्पादित की जा सकती है, फाइल किया जा सकता है और उस न्यायालय से डिक्री का अंतरण अभिप्राप्त करना अपेक्षित नहीं है जिसकी माध्यस्थम् कार्यवाहियों पर अधिकारिता थी । (पैरा 15 और 22)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2015] ए. आई. आर. 2015 (1) कर्नाटक 261 :
श्री चन्द्रशेखर बनाम **टाटा मोटर फाइनेंस लि. और अन्य** ; 5

[2013] 2013 का सीएमपीएमओ सं. 56, तारीख 17 सितंबर, 2013 को विनिश्चित :
जसविंदर कौर और एक अन्य बनाम
टाटा मोटर फाइनेंस लिमिटेड ; 5

[2013] (2013) 10 जे. टी. एस. सी. 35 :
स्वास्तिक गैसेज प्राइवेट लिमिटेड बनाम
इंडियन ऑयल कारपोरेशन लिमिटेड ; 5

[2013] (2013) 100 ए. एल. आर. 766 =
2013 एस. सी. सी. इला. 13365:
जीई मनी फाइनेंशियल सर्विसेज लि. बनाम
मोहम्मद अज़ाज़ और एक अन्य ; 5

[2012] (2012) 1 आर. एल. डब्ल्यू. 960 :
कोटक महिन्द्रा बैंक लि. बनाम रामशरण गुर्जर
और एक अन्य ; 5

[2012] 2012 मनु/पीएच/2896 :
इंडस्ट्रियल बैंक लिमिटेड बनाम
भूल्लर ट्रांसपोर्ट कंपनी ; 5

[2011] (2011) 4 के. एल. जे. 475 :
महाराष्ट्र एपेक्स कारपोरेशन लि. बनाम
वी. बालाजी जी. और एक अन्य ; 5

[2011] (2011) 4 एल. डब्ल्यू. 745 :
कोटक महिन्द्रा बैंक लि. बनाम
शिवकामा सुंदरी और अन्य ; 5, 21

[2009] (2009) 159 डी. एल. टी. 579 :
दालिम इंडस्ट्रियल कंपनी लि. बनाम
नुमालीगढ़ रिफाइनरी लि. ; 5, 20

[2006] ए. आई. आर. 2006 मध्य प्रदेश 34 :
कम्प्यूटर सांइसिज कारपोरेशन इंडिया प्राइवेट लि.
बनाम हरीश चन्द्र लोडवाल और एक अन्य ; 5

[2001] ए. आई. आर. 2001 कर्नाटक 364 :
आई. सी. डी. एस. लि. बनाम मंगला बिल्डर्स प्रा. लि.
और अन्य । 5

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2018 की सिविल अपील सं. 1650.

2011/13 के निष्पादन मामला सं. 108 में जिला न्यायाधीश, मुरैना, मध्य प्रदेश के तारीख 20 मार्च, 2014 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध

संविधान के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री बालाजी श्रीनिवासन, (सुश्री) प्रतीक्षा मिश्रा, मयंक खिरसागर, वैष्णवी सुब्रह्मण्यम् और अभिषेक भारती

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री प्रशांत शुक्ला, पशुपति नाथ राजदान, ओसामा अहमद अब्बासी और (सुश्री) अनुश्री मिश्रा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संजय किशन कौल ने दिया ।

न्या. कौल – वर्तमान अपील में विभिन्न उच्च न्यायालयों की इस प्रश्न पर विधिक राय की भिन्नता को स्थिर किया जाना अपेक्षित है कि माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "उक्त अधिनियम" कहा गया है) के अधीन पंचाट को निष्पादन के लिए क्या पहले उस न्यायालय में फाइल किया जाना अपेक्षित है जिसकी माध्यस्थम् कार्यवाहियों पर अधिकारिता है और फिर डिक्री का अंतरण अभिप्राप्त किया जाए या क्या पंचाट को सीधे तौर पर उस न्यायालय में फाइल और निष्पादित किया जा सकता है जहां आस्तियां अवस्थित हैं ।

तथ्य

2. अपीलार्थी का यह दावा है कि प्रथम प्रत्यर्थी एक टाटा लॉरी-एचसीवी 2005 माडल खरीदने के लिए ऋण प्रदान करने हेतु अपीलार्थी के पास आया और अपीलार्थी द्वारा तारीख 18 अगस्त, 2005 के ऋण करार में विनिर्दिष्ट निबंधनों और शर्तों पर उसके द्वारा ऋण प्रदान किया गया । प्रत्यर्थी सं. 2 ने कथित रूप से उसी तारीख को एक अलग प्रत्याभूत पत्र निष्पादित करके ऋण के प्रतिसंदाय के लिए प्रत्याभूति दी । ऋण का प्रतिसंदाय तारीख 3 सितंबर, 2005 से आरंभ होकर तारीख 3 जनवरी, 2009 तक किश्तों में किया जाना था ।

3. अपीलार्थी का यह अभिकथन है कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने 20वीं किश्त से आगे संदाय करने में व्यतिक्रम किया । तथापि, यान को पुनः कब्जे में नहीं लिया जा सका और ऋण वसूल करने के लिए ऋण के करार में अंतर्विष्ट माध्यस्थम् खंड के निबंधनों के अनुसार माध्यस्थम् कार्यवाहियां आरंभ की गईं । श्री एस. शांतनकृष्णनन्, अधिवक्ता को तारीख 3 मई, 2011 को एकल मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया गया और मध्यस्थ के समक्ष दावा कथन फाइल किया गया किंतु प्रत्यर्थियों पर इसकी तामीली

नहीं हुई । प्रकाशन के माध्यम से सूचना तामील की गई किंतु चूंकि प्रत्यर्थियों की ओर से कोई हाजिर नहीं हुआ, इसलिए तारीख 22 अक्तूबर, 2011 को 12,69,420/- रुपए की राशि का तारीख 4 अप्रैल, 2011 से लेकर वसूली होने तक 18 प्रतिशत वार्षिक ब्याज़ और खर्चे सहित एकपक्षीय माध्यस्थम् पंचाट किया गया ।

4. अपीलार्थी का पक्षकथन यह है कि पंचाट उक्त अधिनियम की धारा 36 के अधीन डिक्री के रूप में प्रवर्तनीय होने के कारण सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "उक्त संहिता" कहा गया है) की धारा 151 के साथ पठित धारा 47 और आदेश 21, नियम 27 के अधीन मुरैना, मध्य प्रदेश स्थित न्यायालयों की अधिकारिता में निष्पादन कार्यवाहियां फाइल की गईं । प्रत्यर्थियों ने कार्यवाहियों का अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर प्रतिवाद करने की ईप्सा की कि जिस यान के विरुद्ध ऋण दिया गया था वह चोरी हो गया था । कार्यवाहियों के अधिक विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है, किंतु यह कहना पर्याप्त है कि विचारण न्यायालय ने तारीख 20 मार्च, 2014 के आदेश द्वारा अधिकारिता की कमी के कारण निष्पादन आवेदन को सक्षम अधिकारिता के न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने के लिए वापस कर दिया । इस निर्णय का प्रभाव यह था कि अपीलार्थी के लिए यह अपेक्षित था कि वह पहले तमिलनाडु में सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के समक्ष निष्पादन कार्यवाहियां फाइल करता, डिक्री का अंतरण अभिप्राप्त करता और केवल इसके पश्चात् मुरैना स्थित विचारण न्यायालय में कार्यवाहियां फाइल की जा सकती थीं । इस पर विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया मत मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय और कर्नाटक उच्च न्यायालय की राय पर आधारित था, जबकि यह अभिवाक् किया गया कि राजस्थान उच्च न्यायालय और दिल्ली उच्च न्यायालय के मत इसके प्रतिकूल हैं । याची ने विचारण न्यायालय के उक्त आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में समावेदन नहीं किया अपितु सीधे इस न्यायालय में विशेष इजाजत याचिका फाइल करके इस आधार पर समावेदन किया कि इस न्यायालय द्वारा कुछ अन्य उच्च न्यायालयों की राय में विरोध होने के कारण पहले ही व्यक्त किए गए मत को ध्यान में रखते हुए मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में समावेदन करने से कोई उपयोगी प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा ।

विरोधी मत

क. उस न्यायालय के समक्ष निष्पादन आवेदन फाइल करने से पूर्व,

जहां आस्तियां अवस्थित हैं, पहले डिक्री का अंतरण अभिप्राप्त करना चाहिए ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया)

5. पूर्वोक्त दृष्टिकोण मध्य प्रदेश और हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया है :

(i) **कम्प्यूटर सांइसिज कारपोरेशन इंडिया प्राइवेट लि.** बनाम **हरीश चन्द्र लोडवाल और एक अन्य**[1] – मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने माध्यस्थम् करार की बाबत अधिकारिता के विवाद्यक पर विचार करने के लिए उक्त अधिनियम की धारा 2(ड़), जिसमें "न्यायालय" को परिभाषित किया गया है, के साथ पठित धारा 42 के उपबंधों का अवलंब लिया है । उक्त अधिनियम की धारा 36, जिसमें पंचाट के प्रवर्तन के संबंध में उपबंध है और उसमें यह विहित किया गया है कि "पंचाट सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के अधीन उसी रीति में प्रवर्तित किया जाएगा मानो यह न्यायालय की डिक्री हो", के संदर्भ में यह मत व्यक्त किया गया कि यही सिद्धांत किसी डिक्री को प्रवर्तित करने के लिए भी लागू होगा । चूंकि संहिता की धारा 37 में उस न्यायालय को परिभाषित किया गया है जो डिक्री पारित करता है और धारा 39 में डिक्री के अंतरण की प्रक्रिया अधिकथित की गई है, इसलिए यह राय व्यक्त की गई की पंचाट के निष्पादन के लिए डिक्री का अंतरण आज्ञापक है ।

(ii) **जसविंदर कौर और एक अन्य** बनाम **टाटा मोटर फाइनेंस लिमिटेड**[2] वाले मामले में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय, शिमला का दृष्टिकोण – विद्वान् एकल न्यायाधीश ने इस तथ्य पर विचार किया कि माध्यस्थम् कार्यवाहियां उक्त अधिनियम के अनुसार मुम्बई में तय की गई हैं और पंचाट मुम्बई में दिया गया है । इसके पश्चात्, विद्वान् एकल न्यायाधीश ने **स्वास्तिक गैसेज प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **इंडियन ऑयल कारपोरेशन लिमिटेड**[3] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय से भरपूर मात्रा में उद्धृत किया । इसके पश्चात्, विद्वान् न्यायाधीश एक बार पुनः कर्नाटक उच्च न्यायालय के **आई. सी. डी. एस. लि.** बनाम **मंगला बिल्डर्स प्रा. लि. और अन्य**[4] वाले मामले से तत्समय प्रचलित मत से भरपूर मात्रा में उद्धृत किया,

---

[1] ए. आई. आर. 2006 मध्य प्रदेश 34.

[2] 2013 का सीएमपीएमओ सं. 56, तारीख 17 सितंबर, 2013 को विनिश्चित.

[3] (2013) 10 जे. टी. एस. सी. 35.

[4] ए. आई. आर. 2001 कर्नाटक 364.

जिसमें विद्वान् एकल न्यायाधीश ने पूर्वोक्त मत के समर्थन में राय व्यक्त की थी ।

(ख) पंचाट उक्त संहिता के उपबंधों के अनुसार उसी रीति में प्रवर्तित किया जाना चाहिए मानो यह उक्त अधिनियम की धारा 36 के अनुसार एक डिक्री है, इससे यह विवक्षित नहीं है कि पंचाट किसी विशिष्ट न्यायालय की डिक्री है तथा यह केवल एक कल्पना है । इस प्रकार, पंचाट निष्पादन के लिए उस न्यायालय के समक्ष फाइल किया जा सकता है जहां निर्णीत ऋणी की आस्तियां अवस्थित हैं ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया)

(i) **दालिम इंडस्ट्रियल कंपनी लि.** बनाम **नुमालीगढ़ रिफाइनरी लि.**[1] (दिल्ली उच्च न्यायालय) – दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने इस दलील को खारिज कर दिया कि उक्त अधिनियम की अधिकारिता विषयक धारा 42, जिसमें उक्त अधिनियम की धारा 34 के अधीन आवेदन उसी न्यायालय में फाइल किए जाने की अपेक्षा की गई है, उसका विस्तार डिक्री के निष्पादन पर नहीं होगा । निष्पादन के लिए आवेदन "माध्यस्थम् संबंधी कार्यवाहियां" नहीं हैं । उक्त संहिता की धारा 38 उस डिक्री पर लागू होती है जो न्यायालय द्वारा यह विहित करते हुए पारित की गई है कि डिक्री उस न्यायालय द्वारा निष्पादित की जा सकेगी जिस न्यायालय ने उसे पारित किया है, या उस न्यायालय द्वारा निष्पादित की जा सकेगी जिस न्यायालय को यह निष्पादन के लिए भेजी जाती है । पंचाट के मामले में कोई न्यायालय डिक्री पारित नहीं करता है ।

विद्वान् एकल न्यायाधीश ने कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 635(4) के उपबंधों, जिनमें कंपनी लॉ बोर्ड के आदेश को कतिपय परिस्थितियों में न्यायालय द्वारा प्रवर्तित किए जाने का उपबंध है, के प्रभाव की उनसे समरूपता करने के लिए चर्चा की ।

(ii) **महाराष्ट्र एपेक्स कारपोरेशन लि.** बनाम **वी. बालाजी जी. और एक अन्य**[2] (केरल उच्च न्यायालय) – विद्वान् एकल न्यायाधीश ने यह मत व्यक्त किया कि न्यायालय निष्पादन आवेदन प्राप्त करने के लिए अपनी फाइल पर डिक्री हेतु जोर नहीं दे सकता है और इस प्रकार, डिक्री के अंतरण का प्रश्न ही नहीं था । निष्पादन न्यायालय को पंचाट की प्रमाणित

---

[1] (2009) 159 डी. एल. टी. 579.

[2] (2011) 4 के. एल. जे. 475.

प्रति के साथ, जहां कहीं भी यह फाइल किया जाता है, निष्पादन आवेदन को स्वीकार करना चाहिए ।

(iii) **कोटक महिन्द्रा बैंक लि.** बनाम **शिवकामा सुंदरी और अन्य**[1] (मद्रास उच्च न्यायालय) – संहिता की धारा 39 उस न्यायालय को, जिसने डिक्री पारित की है, इसे किसी अधीनस्थ न्यायालय को डिक्रीदार द्वारा आवेदन किए बिना स्वयं अपनी प्रेरणा से ही इसे अंतरित करने के लिए समर्थ बनाती है । मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने उक्त अधिनियम और उक्त संहिता के उपबंधों की परीक्षा की और इस प्रक्रिया में उक्त संहिता की धारा 41 के प्रति निर्देश किया जिसमें निष्पादन करने वाले न्यायालय पर उस न्यायालय को, जिसने डिक्री पारित की है, डिक्री के निष्पादन के पूर्ण होने के बारे में या डिक्री निष्पादन करने में असफल रहने के बारे में विद्यमान परिस्थितियों सहित सूचित करने की बाध्यता अधिरोपित की गई है । उक्त अधिनियम की धारा 46 के प्रति एक सरसरी निर्देश किया गया जिसमें आज्ञा-पत्र का उपबंध है । संक्षेप में, जो निष्कर्ष निकाला गया वह यह था कि किसी सिविल न्यायालय की प्रत्येक डिक्री प्राथमिक तौर पर उस न्यायालय द्वारा निष्पादित की जानी चाहिए जिसने डिक्री पारित की है । दूसरी ओर, पंचाट के मामले में, इसे उक्त अधिनियम की धारा 36 के अधीन उसी रीति में प्रवर्तित किया जाना चाहिए मानो यह न्यायालय की डिक्री हो और इस प्रकार पारित किया गया पंचाट केवल निष्पादन के प्रयोजनों के लिए न्यायालय की डिक्री के समतुल्य है । पंचाट के निष्पादन के लिए माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 के उपबंधों से यथा सुभिन्न सिविल न्यायालय द्वारा अनुमोदन की मोहर लगाने की आवश्यकता नहीं होती है । पंचाट उस माध्यस्थम् अधिकरण के माध्यम से निष्पादित नहीं किया जा सकता है, जिसने पंचाट पारित किया है और इस प्रकार उस माध्यस्थम् अधिकरण के लिए, जिसने डिक्री (या पंचाट) पारित किया है, डिक्री को इसके निष्पादन के लिए किसी अन्य न्यायालय को अंतरित करने के लिए कोई परिस्थिति परिकल्पित नहीं है । न तो संहिता में और न ही कहीं और उस न्यायालय को, जिसकी अधिकारिता में माध्यस्थम् कार्यवाहियां हुई थीं, ऐसे न्यायालय के रूप में समझने का कोई उपबंध है जिसने डिक्री पारित की है ।

इस प्रकार यह राय व्यक्त की गई कि :–

---

[1] (2011) 4 एल. डब्ल्यू. 745.

"19. माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित किया गया पंचाट 1996 की धारा 36 के अधीन सिविल न्यायालय की एक डिक्री समझा जाता है, जबकि यह अभिनिर्धारित करने के लिए कहीं कोई गृहीत कल्पना नहीं है कि जिस न्यायालय की अधिकारिता के भीतर माध्यस्थम् पंचाट पारित किया गया था उसे वह न्यायालय समझा जाना चाहिए जिसमें डिक्री पारित की है । अतः, उस न्यायालय के समक्ष जिसकी अधिकारिता के भीतर माध्यस्थम् पंचाट पारित किया गया था, निष्पादन आवेदन इसलिए फाइल करना क्योंकि यह वह न्यायालय है जिसने डिक्री पारित की है, अफसोसजनक रूप से भ्रामक है ।"

* * * * *

"21. अतः, यह स्पष्ट है कि कोई भी न्यायालय, जिसमें पंचाट के निष्पादन के लिए आवेदन फाइल किया जाता है, निष्पादन या आवेदन को पहले किसी अन्य न्यायालय के समक्ष फाइल करने और बाद में उसके समक्ष भेजने की बात पर जोर नहीं दे सकता है । यह प्रतीत होता है कि बंबई उच्च न्यायालय ने भी यही दृष्टिकोण, हालांकि अति विस्तृत आदेश द्वारा नहीं, अपनाया है ।"

एक अन्य परिपेक्ष्य में यह मत व्यक्त किया गया कि उक्त अधिनियम की धारा 21 को देखते हुए पक्षकार माध्यस्थम् स्थान का अवधारण कर सकते हैं और इस प्रकार अधिनियम में सभी क्षेत्रीय बाधाओं को दूर किया गया है ।

(iv) **कोटक महिन्द्रा बैंक लि.** बनाम **रामशरण गुर्जर और एक अन्य**[1] (राजस्थान उच्च न्यायालय) – राजस्थान उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए मत से सहमति व्यक्त की है ।

(v) **जीई मनी फाइनेंशियल सर्विसेज लि.** बनाम **मोहम्मद अज़ाज़ और एक अन्य**[2] (इलाहाबाद उच्च न्यायालय, लखनऊ पीठ) – विद्वान् एकल न्यायाधीश ने यह मत व्यक्त किया कि मध्यस्थ को न्यायालय के रूप में नहीं माना जा सकता है, यद्यपि उसके द्वारा दिया गया पंचाट एक डिक्री के रूप में निष्पादित होगा । इस प्रकार, उक्त संहिता की धारा 38

---

[1] (2012) 1 आर. एल. डब्ल्यू. 960.

[2] (2013) 100 ए. एल. आर. 766 = 2013 एस. सी. सी. इला. 13365.

और 39 का कोई उपयोजन नहीं होगा और इस प्रकार पंचाट को निष्पादन के लिए सिविल न्यायालय के डिक्री के रूप में वहां फाइल किया जा सकता है जहां निर्णीत-ऋणी निवास करता है या कारबार करता है या उक्त न्यायालय की अधिकारिता के भीतर उसकी संपत्तियां हैं ।

(vi) **इंडस्ट्रियल बैंक लिमिटेड** बनाम **भूल्लर ट्रांसपोर्ट कंपनी**[1] (पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय) – दिल्ली उच्च न्यायालय का उपर्युक्त निर्दिष्ट मत अपनाया गया था ।

(vii) **श्री चन्द्रशेखर** बनाम **टाटा मोटर फाइनेंस लि. और अन्य**[2] (कर्नाटक उच्च न्यायालय) – कर्नाटक उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने यह राय व्यक्त की कि उस न्यायालय के समक्ष निष्पादन आवेदन फाइल करने जिसने डिक्री पारित की है और फिर उस न्यायालय में डिक्री का अंतरण करने, जहां आस्तियां अवस्थित हैं, की ईप्सा करने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता ।

हमारा मत

6. संविवाद का मूल्यांकन करने के लिए हम पहले उक्त संहिता और उक्त अधिनियम के उपबंधों पर विचार करना चाहेंगे ।

7. उक्त संहिता का भाग 2 निष्पादन कार्यवाहियों के संबंध में है । उक्त संहिता की धारा 37 में डिक्री पारित करने वाले "न्यायालय" को परिभाषित किया गया है । उक्त संहिता की धारा 38 उस न्यायालय के संबंध में है, जिसके द्वारा डिक्री निष्पादित की जा सकेगी, जो निम्नलिखित प्रकार से है :–

> 38. **वह न्यायालय जिसके द्वारा डिक्री निष्पादित की जा सकेगी** – डिक्री या तो उसे पारित करने वाले न्यायालय द्वारा या उस न्यायालय द्वारा, जिसे वह निष्पादन के लिए भेजी गई है, निष्पादित की जा सकेगी ।

8. उक्त संहिता की धारा 39 में डिक्री के अंतरण के लिए उपबंध किया गया है, जो निम्नलिखित है :–

> "39. **डिक्री का अंतरण** – (1) डिक्री पारित करने वाला

---

[1] 2012 मनु/पीएच/2896.

[2] ए. आई. आर. 2015 (1) कर्नाटक 261.

न्यायालय डिक्रीदार के आवेदन पर उसे सक्षम अधिकारिता वाले अन्य न्यायालय को निष्पादन के लिए भेजेगा –

(क) यदि वह व्यक्ति, जिसके विरुद्ध डिक्री पारित की गई है, ऐसे अन्य न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर वास्तव में और स्वेच्छा से निवास करता है या कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है ; अथवा

(ख) यदि ऐसे व्यक्ति की सम्पत्ति जो ऐसी डिक्री की तुष्टि के लिए पर्याप्त हो, डिक्री पारित करने वाले न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर नहीं है और ऐसे अन्य न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर है ; अथवा

(ग) यदि डिक्री उसे पारित करने वाले न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के बाहर स्थित स्थावर सम्पत्ति के विक्रय या परिदान का निदेश देती है ; अथवा

(घ) यदि डिक्री पारित करने वाला न्यायालय किसी अन्य कारण से जिसे वह लेखबद्ध करेगा, यह विचार करता है कि डिक्री का निष्पादन ऐसे अन्य न्यायालय द्वारा किया जाना चाहिए ।

(2) डिक्री पारित करने वाला न्यायालय स्वप्रेरणा से उसे सक्षम अधिकारिता वाले किसी भी अधीनस्थ न्यायालय को निष्पादन के लिए भेज सकेगा ।

(3) इस धारा के प्रयोजनों के लिए, किसी न्यायालय को सक्षम अधिकारिता वाला न्यायालय समझा जाएगा यदि, उस न्यायालय को डिक्री के अंतरण के लिए आवेदन करने के समय, ऐसे न्यायालय को उस वाद का विचारण करने की अधिकारिता होती जिसमें ऐसे डिक्री पारित की गई थी ।

(4) इस धारा की कोई बात डिक्री पारित करने वाले न्यायालय को उसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के बाहर किसी व्यक्ति या संपत्ति के विरुद्ध ऐसी डिक्री पारित करने के लिए प्राधिकृत करने वाली नहीं समझी जाएगी ।"

9. एक सुसंगत उपबंध, जिसके प्रभाव की वास्तव में ऊपर निर्दिष्ट

किसी निर्णय में चर्चा नहीं की गई है, वह उक्त संहिता की धारा 46 है जिसमें आज्ञा-पत्र को परिभाषित किया गया है । यह निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "46. **आज्ञा-पत्र** – (1) जब कभी डिक्री पारित करने वाला न्यायालय डिक्रीदार के आवेदन पर ठीक समझे तब वह किसी ऐसे अन्य न्यायालय को जो उस डिक्री के निष्पादन के लिए सक्षम है, यह आज्ञा-पत्र निकाल सकेगा कि वह निर्णीत-ऋणी की उसी आज्ञा-पत्र में विनिर्दिष्ट कोई भी सम्पत्ति कुर्क कर ले ।
>
> (2) वह न्यायालय, जिसे आज्ञा-पत्र भेजा जाता है, उस सम्पत्ति को ऐसी रीति से कुर्क करने के लिए कार्यवाही करेगा जो डिक्री के निष्पादन में सम्पत्ति की कुर्की के लिए विहित है :
>
> (3) परंतु जब तक कि कुर्की की अवधि डिक्री पारित करने वाले न्यायालय के आदेश द्वारा बढ़ा न दी गई हो या जब तक कि कुर्की के अवसान के पूर्व कुर्की करने वाले न्यायालय को अंतरित न कर दी गई हो और डिक्रीदार ने ऐसी सम्पत्ति के विक्रय के आदेश के लिए आवेदन न कर दिया हो, आज्ञा-पत्र के अधीन कोई भी कुर्की दो मास से अधिक चालू नहीं रहेगी ।"

10. पूर्वोक्त उपबंध की सुसंगतता यह है कि डिक्रीदार का आवेदन उस न्यायालय को किया जाता है जिसने डिक्री पारित की है और जो उक्त डिक्री का निष्पादन करने में सक्षम किसी अन्य न्यायालय को आज्ञा-पत्र जारी करता है । जैसा कि उल्लेख किया गया है, "न्यायालय जिसने डिक्री पारित की है" अभिव्यक्ति उक्त संहिता की धारा 37 के अनुसार है । हम इस प्रक्रम पर ही यह उल्लेख कर सकते हैं कि पंचाट के मामले में कोई डिक्री पारित नहीं की जाती है अपितु पंचाट ही काल्पनिक रूप से एक डिक्री के रूप में निष्पादित किया जाता है । उक्त अधिनियम के उपबंध माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 के उपबंधों से भिन्न हैं, जिनमें यह अपेक्षा की गई है कि दिया गया पंचाट न्यायालय में फाइल किया जाए और उस पर डिक्री पारित की जाए और उसके उपरांत यह निष्पादनीय होगा ।

11. अब उक्त संहिता के आदेश 21 के उपबंधों पर विचार करते हैं, जो डिक्रियों और आदेशों के निष्पादन के संबंध में है । यदि कोई न्यायालय यह चाहता है कि उसकी स्वयं की डिक्री किसी अन्य न्यायालय द्वारा निष्पादित की जाए, तो ऐसा करने की रीति नियम 6 में उपबंधित है, जो

निम्नलिखित है :–

"आदेश 21 – डिक्रियों और आदेशों का निष्पादन

* * * * *

6. **जहां न्यायालय यह चाहता है कि उसकी अपनी डिक्री किसी अन्य न्यायालय द्वारा निष्पादित की जाए वहां प्रक्रिया** – डिक्री को निष्पादन के लिए भेजने वाला न्यायालय निम्नलिखित भेजेगा, अर्थात् –

(क) डिक्री की प्रति;

(ख) यह उपवर्णित करने वाला प्रमाणपत्र कि डिक्री की तुष्टि उस न्यायालय की अधिकारिता के भीतर जिसने उसे पारित किया था निष्पादन द्वारा अभिप्राप्त नहीं की गई है या जहां डिक्री का निष्पादन भागतः हुआ है वहां वह विस्तार जिस तक तुष्टि अभिप्राप्त कर ली गई है और डिक्री का जो भाग अतुष्ट रहा है वह भाग उपवर्णित करने वाला प्रमाणपत्र; तथा

(ग) डिक्री के निष्पादन के किसी आदेश की प्रति या यदि ऐसा कोई भी आदेश नहीं किया गया है तो उस भाव का प्रमाणपत्र ।"

12. आवेदन प्रस्तुत करने की रीति आदेश 21 के नियम 11(2) में अंतर्विष्ट है, जो निम्नलिखित है :–

"आदेश 21 – डिक्रियों और आदेशों का निष्पादन

* * * * *

11(2) लिखित आवेदन – उसके सिवाय जैसा उपनियम (1) द्वारा उपबंधित है, डिक्री के निष्पादन के लिए हर आवेदन लिखा हुआ और आवेदक या किसी अन्य ऐसे व्यक्ति द्वारा, जिसके बारे में न्यायालय को समाधानप्रद रूप में साबित कर दिया गया है कि वह मामले के तथ्यों से परिचित है, हस्ताक्षरित और सत्यापित होगा और उसमें सारणीबद्ध रूप से निम्न विशिष्टियां होंगी, अर्थात् –

(क) वाद का संख्यांक ;

(ख) पक्षकारों के नाम ;

(ग) डिक्री की तारीख ;

(घ) क्या डिक्री के विरुद्ध कोई अपील की गई है ;

(ङ) क्या डिक्री के पश्चात् पक्षकारों के बीच कोई संदाय या विवादग्रस्त बात का कोई अन्य समायोजन हुआ है और (यदि कोई हुआ है तो) कितना या क्या ;

(च) क्या डिक्री के निष्पादन के लिए कोई आवेदन पहले किए गए हैं और (यदि कोई किए गए हैं तो) कौन से हैं और ऐसे आवेदनों की तारीखें और उनके परिणाम ;

(छ) डिक्री मद्धे शोध्य रकम, यदि कोई ब्याज हो तो उसके सहित, या उसके द्वारा अनुदत्त अन्य अनुतोष, किसी प्रति-डिक्री की विशिष्टियों के सहित चाहे वह उस डिक्री के तारीख के पूर्व या पश्चात् की गई हो जिसका निष्पादन चाहा गया है ;

(ज) अधिनिर्णीत खर्चों की (यदि को हों) रकम ;

(झ) उस व्यक्ति का नाम जिसके विरुद्ध डिक्री का निष्पादन चाहा गया है ; तथा

(ञ) वह ढंग जिसमें न्यायालय की सहायता अपेक्षित है अर्थात् क्या –

(i) किसी विनिर्दिष्टतः डिक्रीत सम्पत्ति के परिदान द्वारा ;

(ii) किसी सम्पत्ति की कुर्की द्वारा या कुर्की और विक्रय द्वारा या कुर्की के बिना विक्रय द्वारा ;

(iii) किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी और कारागार में निरोध द्वारा ;

(iv) रिसीवर की नियुक्ति द्वारा ;

(v) अन्यथा, जो अनुदत्त अनुतोष की प्रकृति से अपेक्षित है ।

(3) जिस न्यायालय से उपनियम (2) के अधीन आवेदन किया गया है, वह आवेदक से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह डिक्री की एक प्रमाणित प्रति पेश करे ।"

13. पूर्वोक्त के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि जिस बात को प्रकट किया जाना होता है वह वादों की संख्या, डिक्री के विरुद्ध अपील, आदि जैसा ब्यौरा होता है, जिसकी सुसंगतता वास्तव में पंचाट को

निष्पादन के प्रयोजनों के लिए न्यायालय की डिक्री के रूप में समझे जाने की कल्पना से नहीं है ।

14. अब हम उक्त अधिनियम के उपबंधों, विशिष्टतया धारा 36(1) के उपबंधों को निर्दिष्ट करना चाहेंगे, जो पंचाट के प्रवर्तन के संबंध में है :–

> "**36. प्रवर्तन** – (1) जहां धारा 36 के अधीन माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त करने के लिए आवेदन करने की अवधि समाप्त हो गई है, तब उपधारा (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए उक्त पंचाट सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के उपबंधों के अनुसार उसी रीति में प्रवर्तित किया जाएगा मानो यह न्यायालय की डिक्री हो ।"

15. पूर्वोक्त उपबंध से यह दर्शित होता है कि पंचाट को उक्त संहिता के उपबंधों के अनुसार उसी रीति में प्रवर्तित किया जाना चाहिए मानो यह डिक्री हो । इस प्रकार, यह प्रवर्तन की क्रियाविधि है, जो डिक्री के प्रवर्तन के समान है किंतु पंचाट स्वयं में सिविल न्यायालय की डिक्री नहीं है क्योंकि सिविल न्यायालय द्वारा ऐसी कोई डिक्री पारित नहीं की जाती है । माध्यस्थम् अधिकरण ही पंचाट देता है और अधिकरण को डिक्री के निष्पादन की शक्ति नहीं होती है । डिक्री के निष्पादन के प्रयोजनों के लिए पंचाट को उसी रीति में प्रवर्तित किया जाना चाहिए मानो यह उक्त संहिता के अधीन डिक्री है ।

16. उक्त अधिनियम की धारा 2 (ड़) में "न्यायालय" को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है :–

> "2. परिभाषाएं .....
>
> * * * * *
>
> (ङ) 'न्यायालय' से अभिप्रेत है –
>
> (i) अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के मामले में किसी जिले में आरंभिक अधिकारिता वाला प्रधान सिविल न्यायालय अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत अपनी मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता का प्रयोग करने वाला उच्च न्यायालय भी है, जो माध्यस्थम् की विषय-वस्तु होने वाले प्रश्नों का, यदि वे वाद की विषयवस्तु होते तो, विनिश्चय करने की अधिकारिता रखता किंतु, ऐसे प्रधान सिविल न्यायालय से अवर श्रेणी का कोई सिविल न्यायालय या कोई लघु वाद न्यायालय इसके अंतर्गत नहीं आता है ;

(ii) अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के मामले में, अपनी मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता का प्रयोग करने वाला उच्च न्यायालय है, जिसे वाद की विषयवस्तु और अन्य मामलों का भाग बनने वाले प्रश्नों का विनिश्चय करने की अधिकारिता है, ऐसा उच्च न्यायालय जिसे उस उच्च न्यायालय से अधीनस्थ न्यायालयों की डिक्रियों की अपीलों को सुनने की अधिकारिता है ।"

17. पंचाट को तथाकथित सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय में फाइल किए जाने और इसके पश्चात् इसके अंतरण की डिक्री अभिप्राप्त करने की बात का समर्थन करने वाला तर्काधार मुख्य रूप से धारा 42 में पाए जाने वाले अधिकारिता खंड पर आधारित है, जो निम्नलिखित है :–

"42. **अधिकारिता** – इस भाग में अन्यत्र या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी माध्यस्थम् करार की बाबत इस भाग के अधीन कोई आवेदन किसी न्यायालय में किया गया है तो वहां ऐसी माध्यस्थम् कार्यवाहियों तथा उक्त करार से उद्भूत होने वाले सभी पश्चात्वर्ती आवेदनों पर उसी न्यायालय की अधिकारिता होगी और माध्यस्थम् कार्यवाहियां उसी न्यायालय में की जाएंगी और अन्य किसी न्यायालय में नहीं की जाएंगी ।"

18. तथापि, पूर्वोक्त उपबंध उस आवेदन के संबंध में लागू होता है, जो न्यायालय में भाग 1 के अधीन फाइल किया गया है । अधिकारिता माध्यस्थम् कार्यवाहियों पर होती है । उस करार और माध्यस्थम् कार्यवाहियों से उद्भूत पश्चात्वर्ती आवेदन केवल उसी न्यायालय में किए जाने चाहिएं । तथापि, जिस उपबंध की अनदेखी की गई है वह उक्त अधिनियम की धारा 32 है, जो निम्नलिखित है :–

"**32. कार्यवाहियों का समापन** – (1) माध्यस्थम् कार्यवाहियों का समापन, अंतिम माध्यस्थम् पंचाट द्वारा या उपधारा (2) के अधीन माध्यस्थम् अधिकरण के आदेश द्वारा होगा ।

(2) माध्यस्थम् अधिकरण, माध्यस्थम् कार्यवाहियों के समापन का वहां आदेश देगा, जहां –

(क) दावेदार अपने दावे को, जब तक कि प्रत्यर्थी आदेश पर आक्षेप नहीं करता है और विवाद का अंतिम परिनिर्धारण अभिप्राप्त करने में, माध्यस्थम् अधिकरण उसके विधिसम्मत हितों

को मान्यता नहीं देता है, प्रत्याहृत कर लेता है ;

(ख) पक्षकार कार्यवाहियों के समापन के लिए सहमत हो जाते हैं ; या

(ग) माध्यस्थम् अधिकरण का यह निष्कर्ष है कि कार्यवाहियों का जारी रखना, अन्य किसी कारण से अनावश्यक या असंभव हो गया है ।

(3) धारा 33 और धारा 34 की उपधारा (4) के अधीन रहते हुए, माध्यस्थम् अधिकरण की आज्ञा का, माध्यस्थम् कार्यवाहियों के समापन के साथ, अंत हो जाएगा ।"

19. पूर्वोक्त उपबंध अंतिम माध्यस्थम् पंचाट द्वारा माध्यस्थम् कार्यवाहियों का समापन किए जाने के संबंध में है । इस प्रकार, जिस पंचाट के निष्पादन की ईप्सा की गई है, जब वह पहले ही किया गया है, तो अंतिम पंचाट करने पर माध्यस्थम् कार्यवाहियों का पहले ही समापन हो जाता है । इस प्रकार, यह बात समर्थनीय नहीं है कि उक्त अधिनियम की धारा 42 की कैसे कोई सुसंगतता है, जो माध्यस्थम् कार्यवाहियों के बारे में अधिकारिता के विवाद्यक के संबंध में है । यह प्रतीत होता है कि उक्त संहिता और उक्त अधिनियम के उपबंधों का घालमेल किया गया है ।

20. पूर्वोक्त संदर्भ में ही **दालिम इंडस्ट्रियल कंपनी लि.** बनाम **नुमालीगढ़ रिफाइनरी लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण में यह अभिलिखित किया गया है कि अधिनियम की धारा 42 निष्पादन आवेदन पर लागू नहीं होगी, जो कि माध्यस्थम् कार्यवाही नहीं है और संहिता की धारा 38 न्यायालय द्वारा पारित डिक्री पर लागू होगी, जबकि पंचाट के मामले में किसी न्यायालय ने डिक्री पारित नहीं की है ।

21. **कोटक महिन्द्रा बैंक लि.** बनाम **शिवकामा सुंदरी और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में मद्रास उच्च न्यायालय ने उक्त संहिता की धारा 46 को निर्दिष्ट किया जो आज्ञा-पत्र के संबंध में है, किंतु यहीं तक अपनी बात समाप्त कर दी गई । इस प्रकार, संहिता के संदर्भ में अपनाया गया दृष्टिकोण यह है कि किसी सिविल न्यायालय की डिक्री प्राथमिक तौर पर उस न्यायालय द्वारा निष्पादित की जानी चाहिए, जो डिक्री पारित करता है और वहां प्रथम बार में निष्पादन आवेदन फाइल किया जाना चाहिए । उक्त अधिनियम की धारा 36 के अधीन पंचाट निष्पादन के प्रयोजनों के लिए

और केवल उसी प्रयोजन के लिए न्यायालय की डिक्री के समान होता है । इस प्रकार, यह ठीक ही मत व्यक्त किया गया है कि माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित किया गया पंचाट उक्त अधिनियम की धारा 36 के अधीन डिक्री समझा जाना चाहिए, जबकि यह अभिनिर्धारित करने के लिए कहीं कोई गृहीत कल्पना नहीं है कि जिस न्यायालय की अधिकारिता के भीतर माध्यस्थम् पंचाट पारित किया गया था, उसे डिक्री पारित करने वाले न्यायालय के रूप में समझा जाना चाहिए । वास्तव में, उक्त अधिनियम में सभी क्षेत्रीय बाधाओं को पार किया गया है ।

निष्कर्ष

22. इस प्रकार, हमारा बेहिचक यह मत है कि पंचाट का निष्पादन के माध्यम से प्रवर्तन देश में कहीं भी जहां ऐसी डिक्री निष्पादित की जा सकती है, फाइल किया जा सकता है और उस न्यायालय से डिक्री का अंतरण अभिप्राप्त करना अपेक्षित नहीं है जिसकी माध्यस्थम् कार्यवाहियों पर अधिकारिता थी ।

23. पूर्वोक्त का प्रभाव यह है कि मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय और हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को विधि की दृष्टि में उचित नहीं ठहराया जा सकता है, जबकि दिल्ली उच्च न्यायालय, केरल उच्च न्यायालय, मद्रास उच्च न्यायालय, राजस्थान उच्च न्यायालय, इलाहाबाद उच्च न्यायालय, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय तथा कर्नाटक उच्च न्यायालय के दृष्टिकोणों से, हमारे द्वारा पूर्वोक्त अभिलिखित कारणों से, सही विधिक स्थिति प्रतिबिंबित होती है ।

24. तद्नुसार, यह अपील मंजूर की जाती है और अपीलार्थी द्वारा मुरैना स्थित न्यायालय के समक्ष फाइल किए गए निष्पादन आवेदन को प्रत्यावर्तित करते हुए तारीख 20 मार्च, 2014 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है । पक्षकार अपना-अपना खर्च स्वयं वहन करेंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.